Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education

Vol. VI, Issue No. XII, October-2013, ISSN 2230-7540

REVIEW ARTICLE

अज्ञेय के काव्य में दार्शनिक चिन्तन

AN INTERNATIONALLY INDEXED PEER REVIEWED & REFEREED JOURNAL

www.ignited.in

Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. VI, Issue No. XII, October-2013, ISSN 2230-7540

अज्ञेय के काव्य में दार्शनिक चिन्तन

Usha Rani

---------------------------------x---------------------------------

युग परिवर्तन के साथ मानव–मस्तिष्क की चिन्तन धारा भी परिवर्तित होती रहती है और वही युग–दर्शन का रूप ग्रहण करती है। इतिहास साक्षी हे कि जैसे–जैसे युग बदलता है, दार्शनिक चिन्तन–धाराएँ भी न्यूनाधिक रूप में बदलती हैं। उन्नीसवीं शताब्दी में नवीन सिद्धान्तों एवं अविष्कारों के प्रचलन के कारण मानव–जीवन पर वैज्ञानिकता एवं सामाजिकता का व्यापक प्रभाव पड़ा। इसकी प्रतिक्रिया में, विश्व की नई परिस्थितियों में, एक ऐसे वाद का विकास हुआ, जो व्यक्ति की वैयक्तिकता और स्वतन्त्रता को सर्वाधिक महत्त्व देता है। दर्शन और कला के क्षेत्र में इसे 'अस्तित्ववाद' कहते हैं। यद्यपि अस्तित्ववादी चिन्तन के मूल में विभिन्न राज्य–क्रान्तियों और पूर्ववर्ती दर्शनों की प्रतिक्रिया कार्यरत थी, तथापि उसके प्रचार–प्रसार का सम्पूर्ण उत्तरदायित्व दो विश्व युद्धों की विभीषिका और निरन्तर विकसित विज्ञान के प्रभाव पर ही है। कीर्केगार्द, नीत्शे, जैस्पर्स, हैडगर, मार्शल, कामू और काफ्का आदि की गणना अस्तित्ववादी चिन्तकों में की जाती है। "हिन्दी का 'अस्तित्व' शब्द अंग्रेजी के म्गपेजमदबम का पर्याय है, जिसका अर्थ है 'होने का भाव'। पारिभाषिक अर्थों में अस्तित्व 'मैं हूँ' के अहसास का नाम है।"1 अस्तित्ववादी दार्शनिक मानते हैं कि जड़ पदार्थों में किसी अहसास का प्रश्न ही नहीं उठता। अतः उनका कोई अस्तित्व नहीं है। केवल इतना ही नहीं अस्तित्ववादी यहाँ तक कहते हैं कि मनुष्य में भी यदि 'मैं हूँ' का अहसास नहीं है तो वह भी जड़ पदार्थों और पशु–पक्षियों की तरह अस्तित्वहीन हैं। अस्तित्ववादी दर्शन में केवल मनुष्य के अस्तित्व पर विचार किया गया है। डॉ. लालचंद गुप्त 'मंगल' के शब्दों में "अस्तित्ववाद मानवीय जिजीविषा, सत्ता और स्वतन्त्रता और महत्ता का दर्शन है।"2 इस दर्शन का केन्द्रीय सूत्र है...अस्तित्व सार का पूर्ववर्ती है। यहाँ अस्तित्व का अर्थ है–मानव का अस्तित्व और 'सार' का अर्थ है–कोई निश्चित उद्देश्य, योजना आकार आदि। अस्तित्ववादी कहता है कि मानव का अस्तित्व बिना–योजना के, बिना उद्देश्य के निरर्थक है। मनुष्य को "अपने अनंत उत्तरदायित्वों के बीच इस धरती पर असहाय और अकेला छोड़ दिया गया है।"

अस्तित्ववादी चिन्तन को सक्रियता प्रदान करने में दोनों विश्व–युद्धों की विभीषिका की बड़ी भूमिका रही है। इसके चर्चित दार्शनिकों में ब्लेसी पास्कल, कीर्केगार्द, फ्रेड्रिक नीत्शे, जैस्पर्स, हैडगर, मार्शल, सार्त्र, कामू आदि के विचारों को महत्त्वपूर्ण स्थान मिलता है।

ब्लेसी पास्कर (1623–1662 ई.)

फ्रांस का प्रसिद्ध गणितज्ञ और वैज्ञानिक था। श्पेन्सीजश् उनकी प्रसिद्ध रचना है। वह सोचता था,

"अनन्त देशकाल न मुझे जानता है, न मैं उसे जानता हूँ। मैं 'अब' इस स्थान पर क्यों हूँ, मैं किसी अन्य स्थान पर या किसी अन्य काल में क्यों नहीं हुआ? वह कौन–सी शक्ति है, जिसने मुझे यहां लाकर पटक दिया है?"

इस प्रकार पास्कल मनष्य के अस्तित्व को अपने भीतर समझने का प्रयत्न करता है।

डेनमार्क के कीर्केगार्द (1813–1855 ई.)

कीर्केगार्द को 'अस्तित्ववाद' का प्रवर्तक माना जाता है। इनके अनुसार–"अस्तित्व शब्द का उपयोग इस दावे पर जोर देने के लिए किया जाता है कि प्रत्येक व्यक्ति की इकाई अपने आप में स्वयं जैसी है और अध्यात्मिक या वैज्ञानिक प्रक्रिया के संदर्भ में अविश्लेषणीय है।"3

फ्रांस के ज्याँ पाल सार्त्र वास्तव में अस्तित्ववाद के पर्याय के रूप में जाने जाते हैं। डॉ. लालचंद गुप्त 'मंगल' के शब्दों में –

"वस्तुतः सार्त्र ही वह दार्शनिक है, जिसने अस्तित्ववाद को अधुनातन जीवन और कलाओं की व्याख्या के एकमात्र दर्शन के रूप में मान्यता देने का अमूल्य प्रयत्न किया है।"4 सार्त्र को आलोचकों ने डूबी मानवता का एक गंभीर और महान चितन्क माना है। सार्त्र ने खुले शब्दों में बार–बार घोषणा की है–

भभडंद पे दंजीपदह मसेम इनज जीम मदेमइसंहम वि्पि ंबजेए दवजीपदह मसेम जींद ीपे सपमिण्य्

इस प्रकार अधिकतर अस्तित्ववाद चिन्तक जर्मनी और फ्रांस में जन्मे और बड़े हुए हैं। इनके जीवन में अभावों व दुरूखों ने इन्हें अंतर्मुखी बना दिया।

अस्तित्ववाद के अनुकूल भारतीय परिवेश :

प्रायः यह सुनने में आता है कि द्वितीय विश्व–युद्ध के पश्चात् यूरोप को जिस संकट का सामना करना पड़ा। भारत में वैसी परिस्थितियों का उदय नहीं हुआ। अतः यहाँ अस्तित्ववाद को मात्र फैशन के रूप में अपनाया गया है। ऐसी तथा अन्य इसी प्रकार की उद्घोषणाएं वास्तविकता से आँख मूंदकर की गई हैं, क्योंकि स्वतन्त्र भारत में हो रही बहुमुखी उन्नति के बावजूद जो चित्र उभरता है। उसका चित्रण इस प्रकार किया जा सकता है।

"–संकट। अंतर्राष्ट्रीय।–सीमा पर संकट। युद्ध की अपरिहार्य आशंका। संदेह और अविश्वास की उगती हुई खौफनाक फसल। पंचवर्षीय योजनाओं की खुशहाली में से झांकता हुआ भारत का नरकंकाल। राष्ट्रीय प्रतीकों की अक्षम्य अवमान्यता, अवहेलना, तिरस्कार। विदेशी मुद्रा का अम्बार, आवेदन, प्रार्थना, भीख और इस पर भी भिखारी की संज्ञा का ढीठ अस्वीकार। समस्याओं की

www.ignited.in

उलझन, उपलब्धियों की मरीचिका।" इन्हीं तथा ऐसी ही समान राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय परिस्थितियों में हमारे लेखकों ने अपनी लेखनी उठाई है।

अज्ञेय का पूरा नाम सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन अज्ञेय है। साहित्य जगत में 'अज्ञेय' उपनाम से ही जाने जाते हैं। अज्ञेय का जन्म 7 मार्च 1911 में उत्तर प्रदेश के देवरिया जिले के कसिया नामक स्थान पर हुआ। हिन्दी साहित्यकारों में ही नहीं, बल्कि भारतीय साहित्यकारों में 'अज्ञेय' के जीवन और अनुभवों जैसी विविधता तथा उतार–चढ़ाव शायद ही किसी साहित्यकार के जीवन में दिखाई पड़ते होंगे। हाँ पश्चिम के बहुत–से साहित्यकारों का जीवन 'अज्ञेय' के जीवन की भाँति विविधतापूर्ण रहा है। भग्नदूत, चिन्ता, इत्यलम्, हरी घास पर क्षण भर, अरी ओ करुणा प्रभामय, आँगन के पार द्वार, कितनी नावों में कितनी बार (ज्ञानपीठ पुरस्कार से पुरस्कृत) 'अज्ञेय' की काव्य–कृतियाँ हैं। अज्ञेय की कविताएँ अस्तित्ववाद की गंभीर रचनात्मक अभिव्यक्ति हैं। अस्तित्ववादी प्रभाव को अज्ञेय स्वयं स्वीकारते हैं। "उन दो–दो प्रवृत्तियों में जिन्हें इसाई अस्तित्ववाद और वैज्ञानिक अस्तित्ववाद कहा जाता है। मेरी विशेष रुचि रही है, क्योंकि मैं समझता था और अब भी मानता हूँ कि यूरोप के वर्तमान संकट को समझने के लिए इन प्रवृत्तियों का अध्ययन आवश्यक है।"6

अस्तित्ववाद मूलतः पश्चिमी अवधारणा हैं, यद्यपि अनेक चिन्तकों ने इसे बौद्ध दर्शन और अरविन्द दर्शन के माध्यम से भारतीय–परम्परा में खोजने का प्रयास किया है। अस्तित्ववाद का उद्‌भव मानवीय जीवन पर आ पड़े संकट के कारण हुआ और मानव–मन की कुंठाओं ने इसे प्रस्फुटित किया। अकेलापन, निराशा, दुःखवाद, मृत्यु–बोध, संत्रास, व्यक्तिवाद का समर्थक, आदि मनःस्थितियाँ मानव जीवन का परम सत्य बन चुकी थीं। यहाँ अस्तित्ववादी दर्शन के इन्हीं कुछ चिन्तन तत्वों और अनुभूतियों के प्रभावाधीन अज्ञेय के काव्य में चर्चा का विषय है। हिन्दी कविता में 1943 ई. के बाद, प्रयोगवाद और नई कविता पर अस्तित्ववाद का गहरा प्रभाव लक्षित होता है। यह प्रभाव अंग्रेजी साहित्य के माध्यम से आया है। अज्ञेय की कविताएं इस दर्शन की गंभीर रचनात्मक अभिव्यक्ति हैं। यह सुखद है कि अज्ञेय का अस्तित्ववाद के उस पक्ष से प्रभावित नहीं किया जिसने हिन्दी के अधकचरे लोगों पर तीखा प्रभाव डाला और जो निश्चय ही भारतीय मनीषा एवं परिस्थिति के अनुकूल है। ईसा का क्रॉस स्वयं कष्ट सहकर दूसरों को मुक्ति देने का प्रतीक है और यह भाव अज्ञेय के काव्य में भी मिलता है।

"दुःख सबको मांजता है

और

चाहे स्वयं सबको मुक्ति देना वह न जाने, किन्तु

जिनको मांजता है

उन्हें यह सीख देता है कि सबको मुक्त रखे।"7

अर्थात् अज्ञेय जागरण और सृजन के इन क्षणों को विस्तार देने के लिए, आस्था को घनीभूत बनाने के लिए 'दर्द' के महत्त्व को समझते हैं। वे समझकर कहते हैं कि दुःख सबको मांजकर यही तो सिखाता है कि दूसरों को मुक्त रखे।

हिन्दी की प्रयोगवादी कविता में 'क्षण के भोग' के प्रति विशेष रुझान प्रकट हुआ। यह अनुभव किया जाने लगा कि अनुभूत सत्य की उपलब्धि किसी विशिष्ट क्षण में होती है, वह विशिष्ट क्षण ही जीवन का अद्वितीय क्षण है–

"आज के विरक्त इस क्षण को

पूरा हम जी लें, पी लें, आत्मसात् कर लें।"8

'हरी घास पर क्षण भर' और 'नदी के द्वीप' इसी शुद्ध वर्तमान क्षण की अभिव्यक्ति है। क्षण की यह अद्वितीय अनुभूति है। क्षण को भोगते हुए भी व्यक्ति में दायित्व चेतना निरन्तर बनी रहती है। वह क्षण को पूरी ईमानदारी से भोग लेना चाहता है। ईमानदारी से भोगे हुए इन क्षणों के प्रति अपना दायित्व को भी वह वहन करता है–

"एक बूंद सहसा

उछली सागर के झाग से

रंग गयी क्षण–भर

ढलते सूरज की आग से।

मुझको दीख गयाः

सूने विराट के सम्मुख।"9

अस्तित्ववादी चिन्तकों ने मृत्यु और जीवन की सार्थकता–निरर्थकता पर व्यवस्थित रूप से चिन्तन किया है। अतः इसकी अभिव्यक्ति करते हुए अज्ञेय कहते है–

"फूल को प्यार करो

पर झरे तो झर जाने दो

जीवन कर रस लोः देह–मन–आत्मा की रसना से

पर जो मरे उसे मर जाने दो

जरा है भुजा तितीर्षा कीः मत बनो बाधा

जिजीविषु को तर जाने दो।

आसक्ति नहीं आनंद है सम्पूर्ण व्यक्ति

की अभिव्यक्तिः

मरू में, किन्तु मुझे घोषित कर जाने दो।"10

व्यक्ति स्वातन्त्रय का समर्थक होने के कारण वह सभी सामाजिक मान्यताओं को नकारता है। सभ्यता, संस्कृति, परम्परा, नैतिक नियम, संविधान सब व्यक्ति की स्वतन्त्रता के मार्ग में बाधाएँ हैं। अस्तित्ववादी समाज के प्रवाह में पड़कर अपने अस्तित्व को उसमें विलीन नहीं करना चाहता। अज्ञेय जी ने व्यक्तिवाद की इस धारणा को 'नदी के द्वीप' कविता में इन शब्दों में व्यक्त किया है–

"हम नदी के द्वीप हैं

हम नहीं कहते कि हमको छोड़कर

स्रोतस्विनी बह जाय।

किन्तु हम हैं द्वीप

हम धारा नहीं हैं।

स्थिर समर्पण है हमारा

स्रोतस्विनी बह जाय

किन्तु हम बहते नहीं हैं

क्योंकि बहना रेत होना है।"11

अस्तित्ववाद मानता है कि यदि व्यक्ति अपने आपको समाज के प्रवाह में बह जाने दे तो उसका अस्तित्व ही समाप्त हो जाएगा, जिस प्रकार नदी का द्वीप प्रवाह में बहकर रेत बन जाता है और अस्तित्व खो बैठता है।

एकाकीपन या अकेलेपन में मनुष्य व्यष्टिगत या समष्टिगत दोनों रूपों में स्वयं को कटा–कटा सा महसूस करता है। वैसे तो मनुष्य आता अकेला है, जाता भी अकेला ही है, लेकिन यह उसकी प्रकृति के कारण बनी विवशता है। अस्तित्ववादी चिन्तन में यह अकेलापन प्रकृति के कारण बनी विवशता है। यही कारण हे कि आज का लेखक बार–बार व्यक्ति के अकेलेपन का आग्रह करता हुआ अपनी रचनाओं में उसकी दुहाई देता हैं। अज्ञेय की मान्यता है कि चरम वेदना एवं अनुभूति के क्षणों में व्यक्ति अकेला ही होता है, "मैं मानता हूँ कि चरम आवश्यकता के, चरम दबाव के, निर्णय करने की आवश्यकता के क्षण में हर व्यक्ति अकेला होता है और इस अकेलेपन में वह क्या करता है इसी में उसके आत्मिक धातु की कसौटी है।"12 अकेलेपन का यही भाव अज्ञेय की इस कविता में व्यक्त होता है–

"भीड़ों में

जब–जब जिसमें आँखें मिलती है

वह सहसा दिख जाता है।

मानव

अंगारे–सा–भगवान–सा

अकेला।"13

एक अन्य स्थान पर भी अज्ञेय का अकेलापन और एकाकीपन नजर आता है–

"यह दीप अकेला स्नेह भरा

है गर्वभरा मदमाता, पर

इसको भी पंक्ति को दे दो

यह अद्वितीय : यह मेरा रू यह मैं स्वयं विसघ्जता"14

वास्तव में 'दीप–अकेला' कविता अज्ञेय के जीवन–दर्शन का बीजमन्त्र है।

अस्तित्ववाद की स्वच्छंदता या चयन की स्वतन्त्रता की प्रवृति में फ्रायड़ की काम–प्रवृत्ति मिलकर नई कविता की उन्मुक्त भोग की प्रवृत्ति की एक प्रबल धारा बन गई है। अज्ञेय, गिरिजाकुमार माथुर, धर्मवीर भारती आदि सभी प्रमुख कवि इसमें प्रवृत्त हुए है। अज्ञेय के काव्य में यह कुंठा उभरकर आई है जैसे–

"आह, मेरा श्वास है उत्तप्त

धमनियों में उमड़ आयी है लहु की धार

प्यार है अभिशप्त–

तुम कहाँ हो नारि?"15

निष्कर्ष :

रूप से कहा जा सकता है कि मनुष्य के अस्तित्व को जीवन और मृत्यु के बीच रेखांकित करने वाली वैचारिकता के रूप में अस्तित्ववादी दर्शन का विकास हुआ। अस्तित्ववादियों की रचनाओं में मानव–जीवन की व्यर्थता, यौन प्रवृत्तियों के घृणास्पद विश्लेषण, अनिश्चयात्मकता के चित्रों को देखकर समीक्षकों ने अस्तित्ववादी साहित्य को आस्थाहीन और निराशावादी घोषित किया है। परन्तु वास्तव में अस्तित्ववादी दर्शन को केवल निराशा और अर्थशून्यता का चिन्तन नहीं माना जा सकता। क्योंकि ऐसे समय में अस्तित्ववादियों ने मनुष्य की अदम्य जिजीविषा का शंखनाद किया जब समूचे संसार पर द्वितीय विश्वयुद्ध के कारण मौत की विभीषिका साकार थी। अज्ञेय के काव्य में हमें अस्तित्ववाद का प्रभाव पूर्णतः नजर आता है। अज्ञेय अस्तित्ववादी प्रभाव को स्वयं स्वीकारते हैं। एकाकीपन, क्षण, निराशा, व्यक्ति स्वातन्त्र्य ये सभी प्रवृत्तियां हमें उनके काव्य में प्राप्त होती हैं।

संदर्भ :

1. अज्ञेय, पूर्वा, पृ. 242–43
2. अज्ञेय, इन्द्रधनुष रौंदे हुए, पृ. 44
3. अज्ञेय, अरी ओ करुणा प्रभामय, पृ. 140
4. अज्ञेय, बावरा अहेरी, पृ. 69
5. अज्ञेय, आत्मनेपद, पृ. 67–68
6. अज्ञेय, अरी ओ करुणा प्रभामय, पृ. 161
7. अज्ञेय, दीप अकेला, पृ. 3
8. अज्ञेय, पूर्वा, पृ. 132–33

9. बालेन्दु शेखर तिवारी, वस्तुनिष्ठ काव्यशास्त्र, क्लसिकल पब्लिशिंग कम्पनी, दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2005, पृ. 127

10. लालचंद गुप्त 'मंगल' उत्तर–शती के श्रेष्ठ हिन्दी कवि, सूर्य भारती प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2003, पृ. 34

11. तेजपाल चौधरी, भारतीय एवं पाश्चात्य काव्यशास्त्र की रूपरेखा, विकास प्रकाशन, कानपुर, प्रथम संस्करण, पृ. 267

12. तेजपाल चौधरी, भारतीय एवं पाश्चात्य काव्यशास्त्र की रूपरेखा, विकास प्रकाशन, कानपुर, प्रथम संस्करण, पृ. 268

13. लालचन्द गुप्त 'मंगल', आधुनिक युगबोध और साहित्य, निर्मल बुक एजेंसी, कुरुक्षेत्र, संस्करण 2003, पृ. 141

14. लालचंद गुप्त 'मंगल', अस्तित्ववाद : दार्शनिक तथा साहित्यिक भूमिका, पृ. 60

15. चन्दा गिरीश, अस्तित्ववादी हिन्दी कहानी, दिव्य डिस्ट्रीब्यूटर्स, कानपुर, प्रथम संस्करण, 2009, पृ. 24